Dr. Madan Paswan, History.

Class: B.A. Part-I (Hons.+Sub.) Paper-Ist

Topic :- Religious Movements - Jainism, Unit-II (ii). of Pre-Mauryan Period.

August Lecture No. 1

Date: 04.8.2020

Hons.+Sub. Paper.

ई० पू० छठी-पाँचवीं शताब्दी में मध्य गंगा के मैदानी इलाकों में कई धार्मिक सम्प्रदायों का उदय हुआ, उनमें से लगभग बासठ धार्मिक सम्प्रदायों के बारे में जानकारी मिलती है। इनमें से कई सम्प्रदाय ऐसे थे, जो पूर्वोत्तर भारत में रहने वाले अलग-अलग समुदायों के प्रचलित धार्मिक अनुष्ठानों, रीति-रिवाजों और धार्मिक प्रथाओं पर आधारित थे। इनमें जैन धर्म महत्वपूर्ण थे। इनका उदय सबसे शक्तिशाली धार्मिक सुधार आंदोलन के रूप में हुआ। हमें ई० पू० छठी और पाँचवीं शताब्दी में मध्य गंगा के मैदान में भौतिक जीवन में हुए बदलावों के बारे में वैसी प्रतिक्रिया मिलती है, जैसी आधुनिक समय में औद्योगिक क्रांति से हुए परिवर्तनों के बारे में है। जैसे औद्योगिक क्रांति के आने से, बहुत से लोग मशीन-पूर्व काल की जीवनशैली में लौट जाना चाहते थे; वैसे ही प्राचीन काल में, लोग लौह-पूर्व काल में वापस जाना चाहते थे।

वर्धमान महावीर और जैन धर्म :

जैन लोगों का मानना था कि उनके सबसे महत्वपूर्ण धार्मिक गुरु महावीर के तेईस और पूर्ववर्ती गुरु थे, जिन्हें तीर्थंकर कहा जाता था। यदि महावीर को आखिरी या चौबीसवीं तीर्थंकर माना जाए तो जैन धर्म का उद्भवकाल ई० पू० नौवीं शताब्दी है। कुछ जैनों के अनुसार ऋषभदेव, पहले तीर्थंकर या जैन गुरु थे, लेकिन वे अयोध्या से जुड़े थे, जो ई० पू० 500 में ही बसा था। 15वीं सदी तक, अधिकांश तीर्थंकरों का जन्म पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार में हुआ था। लेकिन उनकी ऐतिहासिकता बेहद सन्दिग्ध है। मध्य गंगा मैदानों का कोई हिस्सा ई० पू० 5वीं शताब्दी के पहले किसी हाल में नहीं बस पाया था। जाहिर है कि तीर्थंकरों की पौराणिक कथा, जिनमें से अधिकतर का जन्म मध्य गंगा घाटी में और निर्वाण बिहार में प्राप्त हुआ, सम्भवतः प्राचीनता से जैन धर्म को जोड़ने के उद्देश्य से प्रेरित हो। जैन धर्म की सबसे प्राचीनतम, महत्वपूर्ण प्रारम्भिक शिक्षा का श्रेय पार्श्वनाथ को जाता है जो 23वें तीर्थंकर थे और बनारस के थे, उन्होंने शाही जीवन त्याग दिया और संन्यासी बन गए। हालाँकि, उनके आध्यात्मिक उत्तरवर्ती वर्धमान महावीर, जैन धर्म के वास्तविक संस्थापक थे। जैन धर्म के 24वें तीर्थंकर महावीर स्वामी का जन्म 540 ई० पू० (599 ई० पू०) वैशाली के निकट कुण्डग्राम में हुआ था। जो उत्तर बिहार के वैशाली जिले के बसढ़ के साथ लगा हुआ था। उनके पिता सिद्धार्थ ज्ञातृक कुल के गणराजा थे, जो वज्जि संघ का एक घटक था। उनकी माता का नाम त्रिशला था, जो लिच्छवि गणराज्य के प्रधान चेटक की बहन थी जिनकी बेटी की शादी बिम्बिसार से हुई थी। इस प्रकार, महावीर का परिवार मगध का शाही परिवार से जुड़ा था और इन

शाही संबंधों ने उनकी उद्देश्य पूर्ति के लिए राजकुमारों और कुलीनों से सम्पर्क करना आसान बना दिया।

प्रारम्भ में, महावीर ने गृहस्थ जीवन बिताया, लेकिन सच की तलाश में वे 30 साल की आयु में सांसारिक दुनिया छोड़कर संन्यासी बन गए। बारह वर्षों तक जगह-जगह घूमते रहे, किसी एक गाँव में एक दिन से अधिक और किसी एक शहर में पाँच दिन से अधिक नहीं ठहरे। कहा जाता है कि बारह वर्ष की अपनी लम्बी यात्रा के दौरान उन्होंने कभी अपने कपड़े नहीं बदले, सर्वज्ञता (कैवल्य) प्राप्ति के बाद, 42 वर्ष की आयु में उन्होंने अपने शरीर के वस्त्र को पूरी तरह त्याग दिया। कैवल्य के माध्यम से उन्होंने अपने अवसाद और प्रसन्नता पर विजय प्राप्त की। इस विजय के कारण उन्हें महावीर या महानायक या जिना, जिसका अर्थ विजेता है, के रूप में जाना जाता है और उनके अनुयायियों को जैन कहा जाता था। उन्होंने अपने धर्म को 30 साल तक प्रचारित किया और अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु वे कोशल, मगध, मिथिला, चम्पा और अन्य जगहों पर गए। ई०पू० 468 में 72 साल की आयु में आधुनिक राजगीर के निकट पावापुरी नामक स्थान पर उनका निधन हुआ।

एक अन्य परम्परा के अनुसार, उनका निधन ई०पू० 527 में हुआ, लेकिन पुरातत्व ई०पू० छठी शताब्दी में उनके अस्तित्व की पुष्टि नहीं करता। उनसे सम्बन्धित कस्बे और बस्तियाँ ई०पू० 500 तक अस्तित्व में नहीं आए थे।

जैन धर्म के सिद्धान्त :—

जैन धर्म ने पाँच सिद्धान्त सिखाए — (क) हिंसा मत करो, (ख) झूठ मत बोलो (ग) चोरी मत करो, (घ) संचय मत करो और (ङ) इन्द्रिय-निग्रह (ब्रह्मचर्य) का पालन करो। कहा जाता है कि महावीर ने केवल पाँचवाँ सिद्धान्त जोड़ा, अन्य चार उन्होंने अपने पूर्ववर्ती गुरुओं से लिया था। जैन धर्म ने अहिंसा या जीवित प्राणियों को घायल न करने पर बल दिया। इसके परिणाम कभी-कभी बुरे हुए, क्योंकि कुछ जैन राजाओं ने जानवरों की हत्या के दोषी व्यक्तियों को मृत्युदण्ड दिया। जैन धर्म में पुरुष एवं महिला दोनों शिक्षा के प्रसार करने शामिल हो सकते थे। उन्होंने प्राकृत भाषा में अपनी शिक्षाओं का प्रचार किया। कहा जाता है कि उनके अनुयायियों की संख्या 14,000 थी जो बहुत बड़ी संख्या नहीं है।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने जैन धर्म अपना लिया था, अपना सिंहासन छोड़कर, कर्नाटक में अपने जीवन के आखिरी वर्ष जैन संन्यासी के रूप में बिताया, लेकिन इस परम्परा की पुष्टि किसी अन्य स्रोतों से नहीं हुई है।

(Continue...)